जोबनेर कृषि

जनवरी, 2025 वर्ष : 10 अंक : 1 प्रति अंक मूल्य 25 रुपये वार्षिक शुल्क : 250 रुपये

प्रसार शिक्षा निदेशालय

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय

जोबनेर, जिला–जयपुर (राज.) 303 329

लो-टनल और प्लास्टिक मल्चिंग का सब्जी उत्पादन में लाभ

डॉ. बी.एल. आसीवाल[1] एवं डॉ. महेश चौधरी[2]

[1]प्रसार शिक्षा निदेशालय, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

[2]विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, अरनिया

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, राजस्थान

सब्जी उत्पादन की सस्ती, कारगर व व्यवहारिक संरक्षित संरचन हैलो–टनल और प्लास्टिक मल्चिंग। लो–टनल को लगाने में पॉलीहाउस से भी कम खर्च आता है, इसमें पौधों के बेहतर विकास के लिए गर्मियों में सुबह तड़के और सर्दियों में धूप आने पर प्लास्टिक का आवरण हटा देते है। इस प्लास्टिक मल्चिंग के प्रयोग से विपरीत मौसम (अधिक सर्दी, पाला) में भी फसलों को बचाकर सब्जियों का अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है। साथ ही गर्म वातावरण वाली सब्जियों को अधिक ठंड के समय खुले वातावरण में इस तकनीक से बोई जाकर मुख्य फसल से पहले उत्पादन लेकर 2–3 गुणा अधिक लाभ कमाया जा सकता है। इस प्रकार की संरक्षित संरचनाओं में मुख्यतः मिर्च, टमाटर, खरबूजा, चप्पन कद्दू, खीरा, तरबूज, करेला, टिण्डा, लौकी व अन्य कद्दूवर्गीय सब्जियों को मुख्य मौसम से 30 से 60 दिन पहले उगाया जा सकता है। चप्पन कद्दू जैसी फसल की रोपाई तो दिसम्बर व जनवरी माह में तथा खरबूजे की फसल को जनवरी के अंत या फरवरी के प्रथम सप्ताह मे लगातार 30 से 60 दिन तक अगेती उगाया जा सकता है इस प्रकार फसलों के बाजार से अधिक भाव लेकर अधिक लाभ कमाया जा सकत है।

प्लास्टिक मल्चिंग ऐसी संरक्षित संरचनाएं है जिन्हें मुख्य खेत में फसल की रोपाई के बाद प्रत्येक फसल क्यारियों के ऊपर फसल को कम तापमान से होने वाले नुकसान से बचाने के लिये कम ऊँचाई पर प्लास्टिक ढ़ककर बनाया जाता है। ऐसी संरचनायें बनाने के लिए पहले क्यारियां तैयार की जाती है तथा उन पर ड्रिप सिंचाई हेतु पाईप फैलाकर उन पर पतले तार के हुप्स इस प्रकार लगाये जाते है जिससे हुप्स के दोनों सिरो की दूरी 40 से 60 सेमी. रहे तथा इनको 1.5 से 2 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है। हुप्स तार को मोड़ कर भी बनाये जा सकते है तथा इन्हें 2 से 2.5 मीटर की दूरी पर थोड़ा सा अधिक उंचाई (60 सेमी) पर लगाया जाता है। बाद में बेलवाली सब्जियों की तैयार पौध मुख्य खेत मे रोपाई करके दोपहर बाद क्यारियों पर प्लास्टिक चढ़ाया जाता है। प्लास्टिक की मोटाई 20 से 30 माईक्रोन होनी चाहिये तथा लो–टनल बनाने के लिए हमेशा पारदर्शी प्लास्टिक का ही प्रयोग करें। यदि रात को तापमान 5 डिग्री सेन्टीग्रेट से कम है तो 7 से 10 दिन तक प्लास्टिक मे छेद करने की आवश्यकता नही है लेकिन उसके बाद प्लास्टिक में पूर्व दिशा की ओर ऊपर से नीचे की ओर छोटे–छोटे छेद कर दिये जाते है तथा जैसे जैसे तापमान बढ़ता है इन छेदों का आकार भी बढ़ाया जाता है। पहले छेद 2 से 3 मीटर की दूरी पर बनाये जाते है बाद में इन्हें 1 मीटर की दूरी पर बना दिया जाता है।

इस प्रकार पूरी प्लास्टिक को आवश्यकतानुसार तथा तापमान को ध्यान में रखते हुये फरवरी के अन्त या मार्च के प्रथम सप्ताह में फसल के ऊपर से पूर्ण रूप से हटा दिया जाता है।टनल बनाने से पौधे के आसपास का सुक्ष्म वातावरण काफी बदल जाता है। तथा दिन के समय जब अच्छी प्रकार से धूप निकलती हो तो टनल का तापमान 10 से 12 डिग्री बढ़ जाता है। जिससे कम तापमान होते हुये भी इन फसलों की बढ़वार तेजी से होती है तथा रात के समय टनल मे पौधों का पाले से बचाव भी होता है। यह तकनीक उत्तर भारत के मैदानी खासकर शहरों के चारों ओर रहने वाले किसानों के लिए लाभप्रद है।

प्लास्टिक मल्चिंग के मुख्य लाभ

1. प्लास्टिक लो–टनल से सर्दियों में अधिक ठंड के समय भी अच्छा फसल उत्पादन लिया जा सकता है।
2. इस तकनीक में सामान्य फसल से 30–40 दिन अगेती फसल लेकर अधिक बाजार भाव प्राप्त करके अधिक लाभ कमाया जा सकता है।
3. प्लास्टिक लो–टनल में फसल की बढ़वार अच्छी होती है व पाले से बचाया जा सकता है।
4. प्लास्टिक मल्चिंग से मिट्टी की सतह पर खरपतवार उगने की संभावना कम हो जाती है, क्योंकि सूरज की रोशनी इन तक नहीं पहुंच पाती है।
5. यह विधि मिट्टी से पानी के वाष्पीकरण को नियंत्रित करती है, जिससे सिंचाई की आवश्यकता कम हो जाती है तथा मिट्टी में नमी और ठंडक लंबे समय तक बनी रहती है।
6. प्लास्टिक मल्चिंग का उपयोग करने पर बीज जल्दी अंकुरित होते हैं, जिससे फसल चक्र तेज होता है।
7. पौधों की जड़ें खुलकर फैलती हैं, जिससे उन्हें पर्याप्त मात्रा में पोषण मिलता है और वे स्वस्थ रहते हैं।
8. उपज में वृद्धि : इस तकनीक के माध्यम से पौधे अधिक फूल और फल उत्पन्न करते हैं, जिससे फसल उत्पादन बढ़ता है।
9. प्लास्टिक लो–टनल तकनीक से फसल में कीट व व्याधियों का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है।

शीतलहर और पाले से फसल की सुरक्षा के उपाय

डॉ. सन्तोष देवी सामोता, डॉ.आर.एन. शर्मा, सन्दीप कुमार एवं मृणाल पाण्डे
प्रसार शिक्षा विभाग, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर (राज.)

भारत में अभी सर्दी का मौसम है। तापमान गिरने के साथ मौसम में धीरे–धीरे बदलाव हो रहा है। जिसके कारण ओस, कोहरा, ठंड, पाले और धुंध का भी असर दिखाई देने लगा है। बदलते मौसम का असर सबसे ज्यादा फसलों पर होता है। जिससे किसानों को नुकसान होता है। दिसम्बर और जनवरी के महीने में शीतलहर और पाला पड़ने की संभवना सबसे ज्यादा रहती है। शीतलहर और पाले से सर्दी के मौसम में सभी फसलों को नुकसान होता है। पाले के कारण पौधों की कोशिकाओं में उपस्थिति जल जमने से कोशिका भित्ती फट जाती है। जिससे पौधों की पत्तियां, कोंपलें, फूल और फल क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। पाले के प्रभाव से पौधों की पत्तियां और फूल झुलसकर सड़ जाते है। अध–पके फल सिकुड़ जाते हैं। फलियों और बालियों में दाने नहीं बनते है व बन रहे दाने सिकुड़ जाते हैं। पाला पड़ने की स्थिति में दोपहर के पश्चात् हवा का बहना रूक जाता है। मौसम का साफ होने के साथ ही आकाश में बादल नहीं होते है। हवा में नमी की कमी हो जाती है। वातावरण का तापमान 4 डिग्री सेल्सियस से कम होने लगता है। रबी की फसलों में फूल व बालियां बनने के समय पाला पड़ने पर सबसे ज्यादा नुकसान की संभावना रहती है। ऐसे में सर्दी में पाले से फसलों को होने वाले नुकसान से बचाने के लिए किसानों को अलग–अलग उपाय करने चाहिए। पाला लगभग सभी तरह की फसलों के लिए हानिकारक होता है। क्योंकि पाले के प्रभाव से फसल सड़ गलकर बर्बाद हो जाती है। ऐसे में किसान कुछ सावधानियां बरत कर फसल को खराब होने से बचा सकते है। जिससे उन्हें नुकसान नहीं होगा।

1. पाले का फसलों पर असर : पाला जब गेहूं और जौ की फसल पर पड़ता है, तो 10 से 20 फीसदी फसल खराब हो जाती है। सरसों, जीरा, धनियां, सौंफ, चना, मटर, अफीम, गन्ने आदि की फसल में लगभग 30 से 40 फीसदी तक नुकसान होता है। वहीं सब्जियों में आलू, मिर्ची, टमाटर, बैंगन आदि फसल को पाले और शीतलहर से 40 से 60 फीसदी हानि होती है। वहीं पाले और शीतलहर का सबसे ज्यादा असर सरसों, आलू, और नवरोपित फसलों को होता है। पाला गिरने के बाद आलू और सरसों की फसल में झुलसा रोग लग जाता है। जिससे फसल सड़ और सूख कर बर्बाद हो जाती है।
2. पाला से उपज और गुणवत्ता प्रभावित : पाला गिरने के बाद पौधों की पत्तियां झुलस, टहनियां और तने नष्ट हो जाते हैं। जिससे पौधे में कई बीमारियां लग जाती है। साथ ही फसलों के फूल सिकुड़ का झड़ने लगते है। फूल गिरने से फसल की पैदावार में कमी हो जाती है। कई बार फल कमजोर होकर मर जाते है। पाले से पत्तियों और फूलों के मुरझाने के बाद फसल बदरंग हो जाती है। क्योंकि पौधे के पत्तों और तने तक धूप, हवा, नहीं पहुंच पाती है। जिससे पत्ते सड़ने लगते है और पौधे में बीमारियां बढ़ने लगती है। वहीं पाला पड़ने के बाद फल के ऊपर भी धब्बे पड़ जाते हैं। इससे फल की गुणवत्ता के साथ भी खराब हो जाता है। फसल के पौधे कमजोर और पीले पड़ने लगते हैं। जिससे फसल के उत्पादन पर सबसे ज्यादा प्रभाव पड़ता है। इससे कभी–कभी पूरी फसल नष्ट हो जाती है।
3. पाले से बचाव के लिए करे देशी उपाय : किसान हर मौसम में अपनी फसलों को बचाने के लिए कई तरह के उपाय करते हैं। इनमें कुछ देशी जुगाड़ है, जिनके प्रयोग से पाले की मार को रोकी जा सकती है। जिस रात पाला पड़ने की संभावना हो, किसान उस रात में 12 बजे के बाद खेत की मेड़ों पर थोड़ी–थोड़ी दूरी पर कूड़ा कचरा और सूखी पत्तियां, घासफूस जलाकर धुआं कर दे। जिससे धुओं खेत में चला जाएगा। ऐसा करने से फसल के आसपास का वातावरण गर्म हो जाता है। साथ ही किसान धुआं करने के लिए फ्रूड ऑयल का भी प्रयोग कर सकते हैं। इस तरह धुओं करने से खेत का तापमान 4 डिग्री तक बढ़ाया जा सकता है।
4. इसके अलावा पाले से बचाने के लिए किसान फसलों की सिंचाई करें। ऐसा करने फसलों पर पाले का असर कम होता है। क्योंकि नमीयुक्त में जमीन में काफी देर तक गर्मी रहती है और जमीन का तापमान तेजी से कम नहीं होता है। नमी होने पर शीतलहर और पाले से फसल को नुकसान की संभावना कम रहती है। वैज्ञानिकों के अनुसार सिंचाई करने से खेत में 2 डिग्री सेल्सियस तक तापमान बढ़ जाता है।
5. वहीं किसान पाला पड़ने के समय रस्सी के दोनों छोर को पकड़ लें, इसके बाद खेत में एक मेड़ से दूसरी मेड़ की तरफ या एक से दूसरी छोर की तरफ रस्सी से फसल को हिलाते हुए ले जायें। ऐसा करने से पौधों के ऊपर गिरी ओंस की बूंदे नीचे गिर जायेगी और फसल पाले से बच जायेगी। अगर किसान नर्सरी या सीमित क्षेत्र वाली फसल तैयार कर रहे हैं। तो जमीन का तापमान कम नहीं होने देने के लिए फसल को वायुरोधी घासफूस की टाटियां बना कर लगा दें। लेकिन ये काम केवल रात में ही करें। सुबह होने पर इन्हें हटा दें। जिससे फसल को धूप मिल सके।
6. पाले से बचाव का दीर्धकालिन उपाय : फसलों को पाले से लम्बे समय तक बचाव के लिए वायु रोधक पेड़ों को लगाना चाहिए। इसके लिए किसान अपने खेत के उत्तर और पश्चिम मेड पर और खेत में बीच–बीच में उचित जगहों पर शहतूत , शीशम, खेजड़ी, आम, अरडू, बबूल और जामुन के पेड़ लगाएं। ये सभी पेड़ ठंडी हवा और पाले से फसल को

रोकने में सक्षम होते हैं।

7. इन दवाईयों का करें छिड़काव : फसलों को पाले के प्रभाव से बचाने के लिए देशी जुगाड़ के अलावा दवाईयों का भी छिड़काव कर सकते हैं। पाला पड़ने के समय के दौरान किसान फसलों पर गंधक का तेजाब, यूरिया और घुलनशील सल्फर को पानी में मिलाकर छिड़काव करें। फसल पर छिड़काव के लिए इन सभी रसायनिकों दवाईयों की मात्रा पैकेट पर बताई गई माप के अनुसार ही लें। जैसे फसलों पर गंधक का तेजाब के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

8. एक हैक्टेयर क्षेत्र में छिड़काव के लिए प्लास्टिक के स्प्रेयर से एक लीटर गंधक का तेजाब को 1000 लीटर पानी में मिलाकर छिड़कें। इस छिड़काव का असर फसल पर दो सप्ताह तक रहता है। अगर दो सप्ताह के बाद भी पारा गिरने और शीतलहर की संभावना है, तो गंधक के तेजाब को 15–15 दिन के अन्तराल से दोहराते रहें। दवाईयों के छिड़काव से पौधों की कोशिकाओं में मौजूद जीवद्रव्य का तापमान बढ़ जाता है। जिससे फसल का पाले से बचाव होता है। बता दें, सरसों, चना, आलू, गेहूं और मटर की फसलों पर गंधक के तेजाब का छिड़काव करने से पाले के बचाव के साथ फसल में लौह तत्व की जैविक और रसायनिक सक्रियता बढ़ जाती है। जो पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के साथ फसल को जल्दी पकाने में मददगार होती है।

प्याज एवं लहसुन फसल में रोगों एवं कीटों का समन्वित प्रबन्धन

डॉ. आस्था शर्मा, श्रीमति पिंकी शर्मा, डॉ. सुमन चौधरी एवं डॉ. मनीषा शर्मा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

प्याज एवं लहसुन भारत में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसलें है। इनकों सलाद के रूप में, सब्जी में, आचार या चटनी बनाते समय प्रयोग में लाते हैं। प्याज एवं लहसुन में विभिन्न औषधीय गुण भी पाये जाते हैं। प्याज एवं लहसुन की खेती रबी मौसम में की जाती है लेकिन इनको खरीफ (वर्षा ऋतु) में भी उगाया जाता है। प्याज एवं लहसुन की फसल में विभिन प्रकार के रोग एवं कीट लगते हैं जिससे उत्पादन प्रभावित होता है। अच्छी गुणवत्ता वाली उच्च विपणन योग्य कन्द उपज पाने के लिए उचित तरीकों से कीट और रोग प्रबंधन करना बहुत आवश्यर्क है। इसके अलावा, निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए।

1 कीटनाशक का छिड़काव रोपाई से 30 दिनों बाद या जैसे ही कीट रोग प्रकट हो, आरंभ कर देना चाहिए।
2 कीट रोग की तीव्रता के आधार पर 10–15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव किया जाना चाहिए।
3 हमेशा छिड़काव करते समय चिपकने वाले पदार्थ (स्टीकर) ड़ाले।
4 एक ही वर्ग के कीटनाशकों का बार बार इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

प्याज व लहसुन की नर्सरी में लगने वाले रोग:

आर्द्रगलन (डैम्पिंग ऑफ) : यह बीमारी मुख्य रूप से पीथियम, फ्यूजेरियम तथा राइजोक्टोनिया कवकों द्वारा होती है। इस बीमारी का प्रकोप खरीफ मौसम में ज्यादा होता है क्योंकि उस समय तापमान तथा आर्दता ज्यादा होते हैं। इस रोग में पौध का निचला हिस्सा कवक के संक्रमण के कारण गल जाता है और पौध गिर जाती है। बीज में अंकुर निकलने के तुरन्त बाद, उसमें सड़न रोग लग जाता है जिससे पौध जमीन से ऊपर आने से पहले ही मर जाती है।

रोकथाम:

1. इस रोग की रोकथाम के लिए पौधशाला की क्यारियों को जमीन से 15–20 सेंमी. ऊपर बनाना चाहिए एवं पानी के निकास की उचित व्यवस्था रखनी चाहिए।
2. बुवाई के लिए स्वस्थ बीज का चुनाव करना चाहिए।
3. बोने के पूर्व 'कार्बेन्डाजिम या थायरम' से 2.5 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से बीजोपचार करना चाहिए।
4. पौधशाला में क्यारियों को केप्टान या थायरम (0.2 प्रतिशत) या कार्बेण्डाजिम (0.1 प्रतिशत) से अच्छी तरह से तर करना चाहिए।
5. पौधशाला के ऊपरी भाग की मृदा में थाइरम के घोल (2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) या बाविस्टीन के घोल (1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी) से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए।
6. जड़ और जमीन को ट्राइकोडर्मा विरडी के घोल (5.0 ग्राम प्रति लीटर पानी) से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए।

प्याज व लहसुन की खेत में लगने वाले पर्णीय रोग

बैंगनी धब्बा रोग (परपल ब्लॉच) : प्रायः यह बीमारी प्याज एवं लहसुन उगाने वाले सभी क्षेत्रों में पायी जाती है। जो आल्टरनेरिया पोरी नामक कवक (फफूंद) से होता हैं। इस रोग का प्रकोप दो परिस्थितियों में अधिक होता हैं पहला अधिक वर्षा के कारण तथा दूसरा पौधों को अधिक समीप रोपने से। यह रोग प्याज की पत्तियों, तनों तथा बीज डंठलों पर लगती है। रोग ग्रस्त भाग पर सफेद भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जिनका मध्य भाग बाद में बैंगनी रंग का हो जाता है। इन बैंगनी धब्बों पर पृष्ठीय बीजाणुओं के बनने से ये काले रंग के दिखाई देते हैं। अनुकूल

समय पर रोगग्रस्त पत्तियां झुलस जाती हैं तथा पत्ती और तने गिर जाते हैं जिसके कारण कन्द और बीज नहीं बन पाते।

रोकथाम:

1. 2–3 साल का फसल–चक्र अपनाना चाहिए। प्याज से संबंधित चक्र शामिल नहीं करना चाहिए।
2. पौध की रोपाई के 45 दिन बाद 0.25 प्रतिशत डाइथेन एम–45 या कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) का चिपकने वाली दवा मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। यदि बीमारी का प्रकोप ज्यादा हो तो छिड़काव 3–4 बार प्रत्येक 10–15 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

झुलसा रोग (स्टेमफीलियम ब्लाइट)

यह रोग *स्टेमफीलियम वेसकेरियम* नामक कवक द्वारा फैलता है। इस रोग की पत्तियों या फूल की डण्डियों पर एक ओर से पीले नारंगी रंग के धब्बे बनते है। शीघ्र ही इन धब्बों का आकार बढ़ने लगता है और सारी पत्तियां सूख जाती है और आधार की तरफ बढ़कर पूरी सूख कर जल जाती हैं और कन्दों का विकास नहीं हो पाता।

रोकथाम:

1. स्वस्थ एवं अच्छी प्रजाति के बीज का प्रयोग करना चाहिए।
2. लम्बा फसल–चक्र अपनाना चाहिए।
3. पौध की रोपाई के 45 दिनों के बाद 0.25 प्रतिशत मैन्कोजेब (डाइथेन एम–45) या डाईफेनाकोनाजोल अथवा अजोक्सीस्ट्रोबीन 0.1 प्रतिशत का छिड़काव प्रत्येक 15 दिन के अन्तराल पर 3–4 बार करना चाहिए।
4. जैविक विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्डयू) : यह बीमारी पेरेनोस्पोरा डिस्ट्रक्टर नामक फफूंद के कारण होती है इस रोग के लक्षण पत्तियों एवं पुष्प वृंत पर सर्वप्रथम प्रकट होते हैं। पत्तियों तथा बीज डंठलों की सतह पर बैंगनी रोयेंदार वृद्धि इस रोग की पहचान है। रोग की सर्वांगी दशाओं में पौधा बौना हो जाता है। धीरे–धीरे इनका आकार बढ़ता है तथा संक्रमित स्थान से पत्तियाँ एवं पुष्प वृंत टूट जाते हैं रोगी पौधे से प्राप्त कन्द आकार में छोटे होते हैं तथा इनकी भंडारण अवधि कम हो जाती है।

रोकथाम :

1. हमेशा अच्छी प्रजाति के बीजों का इस्तेमाल करना चाहिए।
2. पौध को लगाने से पहले खेतों की अच्छी तरह से जुताई करना चाहिए जिससे उसमें उपस्थित रोगाणु नष्ट हो जाये।
3. बीमारी का प्रकोप होने पर 0.25 प्रतिशत मैन्कोजेब 0.2 प्रतिशत सल्फर युक्त कवकनाशी का घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर दो से तीन बार छिड़काव करना चाहिए।

प्याज का कण्ड (स्मट) : इस रोग से ग्रस्ति पत्तियों और बीजपत्रों पर काले रंग के फफोले बनते है जो बाद में फट जाते हैं और उसमें से रोगजनक फंफूदी के असंख्य बीजाणु काले रंग के चूर्ण के रूप में बाहर निकलते हैं और दूसरे स्वस्थ पौधों में रोग फैलाने में सहायक होते हैं। यह बीमारी यूरोस्टिीस सीपली नामक फंफूद से फैलती है।

रोकथाम

1. हमेशा स्वस्थ एवं उत्तम कोटि के बीजों का इस्तेमाल करना चाहिए।
2. बीज को बोने से पूर्व थाइरम या कैप्टान 2.0–2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करें।
3. दो–तीन वर्ष का फसल–चक्र अपनाना चाहिए।

श्याम वर्ण

खरीफ में इस बीमारी का अधिक प्रकोप होता है क्योंकि आकाश में बादलों के मौसम के कारण अधिक नमी एवं तापमान इसके प्रसार के लिए उपयुक्त होते हैं। इस रोग में पत्तियों पर भूमि के निकट राख के समान धब्बे प्रारंभिक अवस्था में बनते हैं।

रोकथाम:

1. इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर मेंकोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर) या कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) दवा का छिड़काव रोग नियंत्रण होने तक 12–15 दिन के अंतराल में करना चाहिए।
2. रोपाई के पूर्व पौधों को कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम प्रति लीटर) के घोल में डुबाकर लगाने से रोग का प्रकोप कम होता है।
3. खेतों में जलनिकास का उचित प्रबंधन करना चाहिए।
4. पौधशाला में बीज अधिक घना नहीं बोना चाहिए।

आधार विगलन:

अधिक आर्द्रता एवं अधिक तापमान में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग के प्रारंभिक लक्षण कम वृद्धि एवं पत्तियों का पीला पड़ना है। इसके बाद पत्तियाँ ऊपर से सूखना प्रारम्भ होती हैं एवं मुरझाकर सड़ने लगती हैं। पौधों की जड़ों में भी सड़न होने लगती है एवं पौधे आसानी से उखड़ जाते हैं। अधिक प्रकोप होने पर कंद भी जड़ वाले भाग से सड़ने लगते हैं।

रोकथाम:

1. इस रोग से बचाव हेतु गर्मी में गहरी जुताई कर खेत को खुला छोड़ना चाहिए।
2. पॉलिथीन की चादर से भूमि का सौर उपचार करना चाहिए।
3. रोगजनक कवक भूमिगत रहते हैं इसलिए उसी खेत में बार–बार प्याज नहीं लगाना चाहिए एवं फसल चक्र अपनाना चाहिए।
4. बाविस्टिन या थायरम 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए।

प्याज व लहसुन के प्रमुख कीट

चूसक कीट (थ्रिप्स टेबेसाई)

ये प्याज का प्रमुख रूप से हानि पहुंचाने वाला कीट है। इनका आक्रमण तापमान में वृद्धि के साथ तीव्रता से बढ़ता है और मार्च में अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। इनका रंग हल्का पीले से भूरे रंग का तथा छोटे–छोटे गहरे चकत्ते युक्त होता है। इस कीट के निम्फ एवं प्रौढ़ दोनों ही अवस्थायें मुलायम पत्तियों का रस चूस कर उन्हें क्षति पहुँचाती है। इस कीट से प्रभावित पत्तियों में जगह जगह पर सफेद धब्बे दिखाई देते हैं। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियां सिकुड़ जाती है और पौधों की बढ़वार रुक जाती है तथा प्रभावित पौधों के कंद छोटे रह जाते हैं जिससे उपज मे कमी हो जाती है।

रोकथाम:

सर्वप्रथम रोपाई के पूर्व पौधों की जड़ों को दो घंटे तक कार्बोसल्फान एक मिली प्रति लीटर पानी के घोल से उपचारित करना चाहिए।

1. इन कीटों का संक्रमण दिखाई देने पर नीम द्वारा निर्मित कीटनाशी (जैसे ईकोनीम, निरिन या ग्रेनीम) 3–5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से आवश्यकतानुसार घोल तैयार कर शाम के समय फसल पर 10–12 दिनों के अंतराल पर 2–3 छिड़काव करें
2. डाईमेथोऐट 30 ई.सी. 650 मि.ली. प्रति 600 ली. पानी के साथ या मेटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. 1ली. प्रति 600 ली. पानी के साथ या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 30 ई. सी. 5 मि.ली. प्रति 15 ली. पानी के साथ छिड़काव करें। कीटनाशक के सही प्रभाव हेतु चिपकने वाले पदार्थ (स्टिकर) जैसे सेन्डोविट या टीपॉल (2.5 ग्राम प्रति लिटर) का प्रयोग करना चाहिए।

प्याज की मक्खी : मैगट (हाईलिमिया ऐंटीकुआ) : यह मक्खी प्याज की फसल का प्रमुख हानिकारक कीट है जो अपने मैगट पौधों के भूमि के पास वाले भाग, आधारीय तने में दिए जाते हैं। मैगटों की संख्या 2–4 तक हो सकती है। इनसे भूमि के पास वाले तने का भाग सड़कर नष्ट हो जाने से पूरा पौधा सूख जाता है। कभी–कभी इस कीट द्वारा फसल को भारी मात्रा मे क्षति होती है।

रोकथाम:

1. फसल की रोपाई पूर्व, खेत की तैयारी करते समय नीम की खली / खाद 3–4 क्विं. प्रति एकड़ की दर से जुताई कर भूमि मे मिलाएं।
2. खेत की तैयारी करते समय कीटनाशी क्लोरोपाइरिफॉस 5 प्रतिशत की दर से जुताई करते समय भूमि मे मिलाएं तत्पश्चात फसल की रोपाई करें।
3. खड़ी फसल मे इस कीट (मैगट) का संक्रमण दिखाई देने पर कीटनाशी क्यूनालफॉस 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से आवश्यकतानुसार मात्रा में घोल तैयार कर शाम के समय 2–3 छिड़काव करें।

कटवा : इस कीट की सूंडियाँ या इल्ली जो कि 30–35 मिली मीटर लंबी एवं राख के रंग की होती है, पौधों की जमीन के अंदर वाले भाग को कुतर कर नुकसान पहुंचाती हैं। इससे पौधे पीले पड़ने लगते हैं एवं आसानी से उखड़ जाते हैं।

रोकथाम:

1. फसल चक्र अपनाना चाहिए।
2. आलू के बाद प्याज की फसल नहीं लगाना चाहिए।
3. रोपाई के पूर्व थीमेट 10 जी 4 कि.ग्रा. एकड़ की दर से खेत में मिलाना चाहिए।

शीर्ष छेदक (हेलिओथिस आर्मिजेरा)

इस कीट का लार्वा पत्तियों को काटकर फसल को हानि पहुँचाता है। यह कीट प्याज की बीज वाली फसल में ज्यादा क्षति पहुँचाता है।

रोकथाम:

इनके नियंत्रण हेतु मिथाइल डेमेटोन या साइपरमेथ्रिन 0.5–1.0 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। घोल में 0.1 प्रतिशत ट्राइट्रोन या सैन्डोविट नामक चिपचिपा पदार्थ अवश्य मिलायें।

सौंफ की फसल को कीट-रोगों से बचायें

डॉ. आर. एन. शर्मा, डॉ. रामफूल पूनिया एवं
डॉ. दिलीप सिंह
कृषि महाविद्यालय, कुम्हेर, राजस्थान
(श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर)

विश्व में मसाला उत्पादन एवं मसाला निर्यात में भारत का प्रथम स्थान है। इस समय देश में 1395560 हैक्टेयर क्षेत्रफल से 1233478 टन प्रमुख बीजीय मसालों का उत्पादन हो रहा है। भारत में सौंफ की खेती मुख्यतः राजस्थान, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश में होती है। राजस्थान में कुल 5.90 लाख हेक्टयर क्षेत्र में मसालों की खेती की जाती है जिससे 6.47 लाख टन उत्पादन होता है। राष्ट्रीय स्तर पर सौंफ उत्पादन में राजस्थान का दूसरा स्थान है। राज्य में टोंक, सिरोही, जोधपुर, भरतपुर, अजमेर, भीलवाडा, कोटा एवं पाली जिलों में इसकी फसल उगाई जाती है। सौंफ में रूचिकर गंध व स्वाद के कारण इसका उपयोग साबुत या पीसकर कई भेज्य पदार्थों में किया जाता है। इसमें पाये जाने वाले पाचक एवं वायुनाशक गुणों के कारण इसका उपयोग औषधि के रूप में भी किया जाता है। इसमें लगने वाले मुख्य रोग जैसे रेमुलेरिया ब्लाईट, अल्टरनेरिया ब्लाईट, छाछया पाऊडरी मिल्ड्यू एवं जड व तना गलन एवं कीट जैसे मोयला, पर्णजीवी थ्रिप्स एवं मकडी इसके उत्पादन एवं गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं।

इसको नुकसान पहुँचाने वाले रोगों व कीटों का यदि उचित समय पर प्रबन्धन किया जाये तो सौंफ की अच्छी गुणवत्ता की अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

(अ) सौंफ में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका प्रबन्धन –

1. रेमुलेरिया ब्लाईट झुलसा: यह रोग बुवाई के 60–70 दिन बाद पुरानी पत्तियों की निचली सतहों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। रोग की शुरूआत में राख के समान छोटे धब्बे पत्तियों की निचली सतहों पर दिखाई देते हैं जो उग्र अवस्था में बडे हो जाते हैं और बाद में सफेद उठी हुई वृद्धि के रूप में दिखाई देते हैं। धीरे–धीरे रोग तने व फलों पर भी फैल जाता है। यह रोग रामुलेरिया फोइनेकुलाई नामक फफूंद द्वारा होता है।

प्रबन्धन: इस रोग की रोकथाम हेतु कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 0.1 प्रतिशत या एजोक्सीस्ट्रोबिन 8.3 प्रतिशत + मेन्कोजेब 66.7 (75 डब्ल्यू. जी.) 0.2 प्रतिशत या ताम्रयुक्त कवकनाशी 0.3 प्रतिशत का घोल बनाकर फसल पर छिडकाव करें। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अन्तराल पर छिडकाव को दोहरावें।

2. अल्टरनेरिया ब्लाईट झुलसा : यह रोग आल्टरनेरिया टेनुईस नामक फफूंद द्वारा होता है। आल्टरनेरिया द्वारा आकमण मुख्यतः पुष्पक्रम पर होता है पत्तियों के सिरे तथा पुष्पक्रम झुके हुए तथा झुलसे दिखाई देते हैं।

प्रबन्धन: एजोक्सीस्ट्रोबिन 8.3 प्रतिशत + मेन्कोजेब 66.7 (75 डब्ल्यू.जी) 0.2 प्रतिशत या ताम्रयुक्त कवकनाशी 0.3 प्रतिशत का घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव को दोहरावें।

3. छाछया पाऊडरी मिल्ड्यू: इस रोग का प्रकोप फरवरी–मार्च के महीनों में अधिक होता है। प्रारम्भ में इस

रोग के प्रकोप से पत्तियों एवं टहनियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है जो बाद में सम्पूर्ण पौधे पर फैल जाता है। यह रोग ईरीसाईफी पोलीगोनी नामक फफूंद द्वारा होता है।

प्रबन्धन: इस रोग की रोकथाम हेतु गंधक के चूर्ण का 20 से 25 किलोग्राम/हैक्टेयर की दर से भुरकाव करना चाहिये अथवा डाइनोकैप 48 ई.सी. (केराथेन) या हेक्साकोनाजोल 5 ई.सी. 1 मिली/लीटर पानी का दर से घोल बनाकर छिड़कना चाहिए। आवश्यकतानुसार 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव को दोहरावें।

4. जड़ व तना गलन: यह रोग स्केलेरोटीनिया स्कलेरोशियम नामक फफूंद द्वारा होता है। इस रोग के प्रकोप से तना नीचे से मुलायम हो जाता है व जड गल जाती है। जडों पर छोटे बडे काले रंग के स्कलेरोशिया दिखाई देते हैं।

प्रबन्धन: बीज को कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. से 2 ग्राम/किलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।

ब. सौंफ के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबन्धन:

1. मोयला, पर्णजीवी थ्रिप्स एवं मकडी: मोयला पौधे के कोमल भाग से रस चूसता है तथा फसल को काफी नुकसान पहुँचाता है। थ्रिप्स कीट बहुत छोटे आकार का होता है तथा कोमल एवं नई पत्तियों से हरा पदार्थ खुरचकर खाता है जिससे पत्तियों पर धब्बे दिखाई देने लगते हैं तथा पत्ते पीले होकर सूख जाते हैं। मकडी छोटे आकार का कीट है जो पत्तियों पर घूमता रहता है व रस चूसता है जिससे पौधा पीला पड़ जाता है।

प्रबन्धन: इन कीटों के नियन्त्रण हेतु डाईमिथोएट 30 ई.सी. या क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 1 लीटर को प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़कना चाहिए। आवश्यकतानुसार छिड़काव 15 से 20 दिन बाद दोहरायें।

आम का गुच्छा रोग एवं उपचार

आशीष कुमार झारोटिया[1], डॉ. डी एस भाटी[2] एवं डॉ. रमाकांत शर्मा[3]
1तकनीकी सहायक एवं 2वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष,
कृषि विज्ञान केन्द्र, अजमेर
3प्राध्यापक (प्रसार शिक्षा) कृषि अनुसंधान उपकेन्द्र, तबीजी, अजमेर

आम का गुच्छा या गुम्मा, आम के वृक्षों पर होने वाला एक रोग है। प्रायः इस रोग के कारकों में फुजेरियम सबग्लुट्टीनेन्स नामक फफूंद का उल्लेख होता है। किन्तु अनेक विशेषज्ञों का मत है कि इस रोग का कारण पौधे में होने वाले हार्मोनों का असंतुलन है। एक अन्य मतानुसार इस रोग का कारण कुछ पोषक तत्वों की कमी भी हो सकती है। गुम्मारोग से ग्रसित आम के पेड़ में पत्तियों एवं फूलों में असामान्य वृद्धि एवं फल विकास अवरुद्ध हो जाता है। इस रोग के कारण आम के उत्पादन मे असाधारण कमी होती है। ऐसा पाया गया है कि आम की भारतीय प्रजातियाँ इस रोग से अधिक ग्रसित होती है।

आम का गुच्छा रोग के लक्षणः

नई पत्तियों एवं फूलों की असामान्य वृद्धि, टहनियों पर एक ही स्थान पर अनगिनत छोटी–छोटी पत्तियां निकल आना, बौर के फूलों का असामान्य आकार होना, फूल का गिर जाना, फल निर्माण अवरुद्ध हो जाना, आदि इस रोग के प्रमुख लक्षण है।

गुम्मा रोग दो प्रकार का होता है–

1. आम के पत्तियों का गुम्माया वानस्पतिक गुच्छा (Vegetative Malformation): आम की टहनी पर एक पट्टी के स्थान पर अनगिनत छोटी–छोटी पत्तियों का गुच्छा बन जाना, तने की गाठों के बीच का अंतराल अत्यधिक कम हो जाना, पत्तियों का कड़ा हो जाना। बाद में यह गुच्छा नीचे की ओर झुक जाता है, जो बन्ची टॉप जैसा दिखता है।

2. आम के फूलों का गुम्मा (Floral Malformation): इस रोग से ग्रसित बौर की डाली अधिक मोटी एवं अधिक शाखायुक्त हो जाती है जिस पर 2 से 3 गुना अधिक अप्रजायी एवं असामान्य पुष्प बन जाते हैं जो कि फल में परिवर्तित नहीं हो पाते हैं। यदि इन पुष्पों से फल बनता भी है तो शीघ्र ही सूख कर धरती पर गिर जाते हैं।

आम के गुच्छा रोग से जुड़े कारक :

1. **विभिन्न किस्मीय कारक** (Variatal factor) :भारत में भादुरान, अबीब, अमीन, धुधिया और लंगड़ा को छोड़कर आम की लगभग सभी किस्में गुच्छा रोग के प्रति संवेदनशील हैं। मिश्रमें जेब्बा, हिएन्डी और अंशस गुच्छा रोग के प्रति प्रतिरोधी हैं।

2. घुनों (Mites) **के कारण :** एसेरिया मैंगिफेरा और टायरो फैगस कैस्टेलानी गुच्छा रोग का कारण बनते हैं।

3. कवकीय कारक : फ्यूसेरियम मोनिलिफॉर्मे, फ्यूसेरियम मोनिलिफॉर्मे व.र. सबग्लूटिनन्स, फ्यूसेरियम ऑक्सीस्पोरम और फ्यूसेरियम सोलानी गुच्छा रोग का कारण बनते हैं।

4. वायरस के कारण:

5. पोषण संबंधी कारक : वित ऊतकों में स्वस्थ ऊतकों की तुलना में नाइट्रोजन का स्तर कम था।

वानस्पति कवित पौधों की पत्तियों में स्वस्थ पौधों की तुलना में राख, सिलिका और कैल्शियम का अनुपात अधिक था।

6. शारीरिक कारक:

क्लोरोफिल मात्रा : वित अंकुरों की पत्तियों में क्लोरोफिल ए, बी और कुल क्लोरोफिल अवयव अधिक मात्रा में थी।

फाइटोहोर्मोन : स्वस्थ ऊतकों की तुलना में वित ऊतकों में ऑक्सिन का निम्न स्तर और जिबरेलिन, साइटोकिनिन, एथिलीन और ए बी ए का उच्च स्तर पाया जाता है।

कार्बोहाइड्रेट : स्वस्थ पौधों की तुलना में वित टहनियों में कार्बोहाइड्रेट का स्तर अधिक था।

निवारक उपाय :

- इस बीमारी का मुख्य लक्षण यह है कि इसमें नपुंसक फूलों का एक ठोस गुच्छा बन जाता है। आम के पौधे को गुम्मा रोग से बचाने के लिए रोगग्रस्त पुष्पों की मंजरियों को 30–40 सेमी. नीचे से कटाई कर दें एवं धरती में खोदकर दबा दें।
- रोपण के लिए रोग–मुक्त पौध चुनें।
- पौधे के वित हिस्सों की मौजूदगी के लिए अपनेबाग की लगातार

निगरानी करें।

- वित बौर की छंटाई से आने वाले वर्षों में पुष्पक्रम में विति की तीव्रता कम हो सकती है।
- पौधे के प्रभावित हिस्सों को हटाकर नष्ट कर दें।
- फूल लगने से पहले और फल तोड़ने के बाद सूक्ष्म तत्वों, जैसे कि जिंक, बोरॉन और कॉपर, का छिड़काव विति नियंत्रित या न्यूनतम करने में कारगर सिद्ध हुआ है।
- एक अध्ययन में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाने से पुष्प गुच्छ निर्माण में कमी देखी गई है।
- फफूंद का फैलाव रोकने के लिए अच्छी स्वच्छता, बाग और उपकरणों का सही प्रबंधन आवश्यक है।
- रोग का फैलाव रोकने के लिए अपने छंटाई उपकरणों की अच्छी तरह सफाई करें।

आम के गुच्छा या गुम्मा रोग का समेकित प्रबंधन:

जैविक नियंत्रण–

संक्रमण कम करने के जिए धतूरा स्टेमोनियम (एल्केलॉयड), कैलोट्रोपिसगाइगेंटी और नीम के पेड़ (एजाडिरेक्टिन) के अर्क का इस्तेमाल करें। ट्राईकोडर्मा हर्जियेनम भी रोगाणु की वृद्धि नियंत्रित करने में बहुत प्रभावशाली है। रोगित पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। रोग–मुक्त रोपण सामग्री का इस्तेमाल करें। संक्रमित पेड़ों से ली गई कलमों का इस्तेमाल न करें।

रासायनिक नियंत्रण–

उपचार हेतु प्रारंभिक अवस्था में जनवरी फरवरी माह में ग्रसित पुष्पों को तोड़ दें एवं अधिक प्रकोप होने पर एन.ए.ए./ 200 पी.पी.एम. वृद्धि होरमोन की 900मिली प्रति 200 लीटर पानी में घोलकर छिडकाव कर दें। कलियाँ आने की अवस्था में जनवरी के महीने में पेड़ के बौर तोड़ देना भी लाभदायक रहता है क्योंकि इससे न केवल आम की उपज बढ़ जाती है अपितु इस बीमारी के आगे फैलने की संभावना भी कम हो जाती है। प्लानोफिक्स/4 मिलीलीटर प्रति 9 लीटर पानी में घोलकर फरवरी–मार्च के महीने में छिड़काव करें।

डॉ. एस. आर. ढाका
प्रसार शिक्षा निदेशक

निदेशक की कलम से

जनवरी माह में कृषि कार्य

प्रिय किसान भाईयों,

1. सरसों में माहू (चेंपा) के नियंत्रण हेतु डाइमेथोऐट 30 ई.सी. एक मिली प्रति लीटर दवा का छिड़काव करें या नीम की निम्बोली 5 प्रतिशत का छिड़काव करें। झुलसा, तुलासिता व सफेद रोली रोग नियंत्रण हेतु 45, 60 व 75 दिन पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यू. पी. या मेंकोजेब 75 प्रतिशत डब्ल्यू पी. 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें।
2. गेहूँ की फसल में फुटान की अवस्था (40–45 दिन) पर एवं चने की फसल में फलियां आने (80–90 दिन की अवस्था) पर दूसरी सिंचाई करें।
3. चने में फली छेदक कीट के नियंत्रण हेतु लगभग 50 प्रतिशत फूल आने पर एन.पी.वी 250 एल.ई. प्रति हैक्टेयर का छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद बेंसीलस थूरेन्जिन्सिस का 1.5 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से एवं तीसरा छिड़काव आवश्यकता हो तो एन.पी.वी का करें। मेलाथियान 50 ई.सी. 1 मिली प्रति लीटर दवा का आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।
4. पाला पड़ने के प्रति सचेत रहे। एकाएक शाम के समय तेज ठण्ड पड़ना, आसमान साफ होना, हवा का रूकना एवं आर्द्रता कम होना आदि पाला पड़ने के संकेत है। पाले के प्रति संवेदनशील फसलें जैसे सरसों, आलू, मटर, टमाटर, बैंगन इत्यादि को पाले से बचाने के लिये खेत की मेड़ों पर धुआं करें या फव्वारा द्वारा हल्की सिंचाई करें। घुलनशील गंधक (1 ग्राम प्रति लीटर पानी) या थायोसेलिसिक अम्ल (0.1 मिली प्रति लीटर पानी) के घोल का फूल आते समय एवं फलियां बनते समय छिड़काव करें।
5. आंवला के पौधे में इस माह पांच या इससे अधिक वर्ष के उम्र वाले पौधों में गोबर की खाद 50 किलो, यूरिया 1100 ग्राम, सिंगल सुपर फॉस्फेट 1.75 किलो व म्यूरेट ऑफ पोटाश 375 ग्राम प्रति पौधों के हिसाब से मिलावें व सिंचाई करें।
6. टमाटर में फल छेदक कीट के नियंत्रण हेतु नीम की निम्बोली के 5 प्रतिशत घोल या एन.पी.वी. 250 एल.ई. या बी.टी.के 750 ग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें या क्लोरेन्ट्रानिलीप्रोल 18.50 ई.सी. का 0.5 मिली प्रति लीटर के हिसाब से छिड़काव करें।
7. आम, अमरूद व अनार में मिली बग कीट का प्रकोप दिखाई देने पर डाइमेथोएट 30 ई.सी. का 1.0 मिली प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।
8. पशुओं में खुरपका–मुहँपका रोग व भेड़ बकरियों में छोटी माता से बचाव के टीके लगावें।

प्रमुख संरक्षक : डॉ. बलराज सिंह
संरक्षक : डॉ. एस. आर. ढाका
प्रधान सम्पादक : डॉ. सन्तोष देवी सामोता
डॉ. बी. एल. आसीवाल
डॉ. बसन्त कुमार भींचर
डॉ. शीला खड़र्कवाल
तकनीकी परामर्श : डॉ. एम.आर. चौधरी
डॉ. आर. पी. घासोलिया
डॉ. डी. के. जाजोरिया
डॉ. रोशन चौधरी

बुक पोस्ट

डाक टिकट

पत्रिका सम्बन्धी आप अपने सुझाव, आलेख एवं अन्य कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ हमारे मेल jobnerkrishi@sknau.ac.in पर भेजे।

प्रकाशक एवं मुद्रक : निदेशालय, प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के लिए अम्बा प्रिन्टर्स, जोबनेर से मुद्रित।